वेदों में पर्यावरण-संरक्षण

डॉ0 चन्द्रकान्त मिश्र

असिस्टेन्ट प्रोफेसर

राजकीय महाविद्यालय

डुमरियागंज, सिद्धार्थनगर

मो0 : 94158552180

E-mail :ckmishra00@gmail.com

पर्यावरण से तात्पर्य परितः आवरण से है, जो मनुष्य को चारों तरफ से आवृत करता हुआ उसके जीवन को पूर्णतया प्रभावित करता है। पर्यावरण का अभिप्राय उस हवा से है जिसमें हम साँस लेते हैं, उस पानी से है जिसे हम पीते हैं। इसका अभिप्राय नदियों और जंगलों से है तथा उन असंख्य जीवों से है, जो विश्व की भूमि, वायु तथा पानी में वास करते हैं। इसका अभिप्राय संस्कृति, परम्पराओं एवं प्रथाओं तथा मानव–जाति की उस विविधता से है जो जनजातियों से लेकर अज्ञातप्राय समुदायों में उनकी विलक्षण शैलियों के रूप में विद्यमान है।[1]

विश्वव्यापी उष्णता का बढ़ता स्तर, ओजोन–परत का क्षय और जैव–विविधता की गम्भीर क्षति ने सभी को पर्यावरण पर बढ़ते खतरों के प्रति सजग बनाया है। 1972 में स्टॉकहोम में ''विश्व पर्यावरण सम्मेलन'' आयोजित किया गया जिसमें बढ़ रहे पर्यावरण–प्रदूषण के प्रति गहरी चिन्ता व्यक्त की गयी और प्रदूषण को रोकने तथा पर्यावरण–संरक्षण के लिए उपाय सोचे गये। भारत भी पर्यावरणीय प्रदूषण के प्रति सचेश्ट हुआ तथा 23 मई, 1986 ई0 को भारत में ''पर्यावरणीय संरक्षण और सुधार अधिनियम'' पारित कर देश में लागू किया गया।[2]

वर्तमान युग में मनुष्य पर्यावरण–प्रदूषण की जिस समस्या का सामना कर रहा है, हमारे वैदिक–ऋषियों ने सहस्रों वर्ष पूर्व ही इस पर्यावरणीय प्रदूषण के समाधानार्थ मानव–समाज का दिग्दर्शन किया था। जैविक एवं अजैविक परिस्थितियों के बीच पूर्ण सामंजस्य स्थापित करके ही पर्यावरण–संरक्षण किया जा सकता है। इस सामंजस्य की निदर्शना वेदों में विशद रूप से की गयी है। कल्याणकारी संकल्पना, शुद्ध आचरण, निर्मल वाणी एवं सुनिश्चित गति क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद की प्रमुख विशेषतायें मानी जाती हैं और पर्यावरण–संरक्षण भी मुख्यतः इन्हीं विशिष्टताओं पर अवलम्बित है।

वेदों में जल, पृथ्वी, वायु, अग्नि, वनस्पति, आकाश आदि के प्रति असीम श्रद्धा प्रकट करने पर अत्यधिक बल दिया गया है। वैदिक ऋषियों ने पर्यावरण के प्रति मानव को सचेत ही नहीं किया, वरन् उसके संरक्षण के लिये प्रेरित भी किया। पर्यावरण की सुरक्षा के निमित्त उसे धार्मिक आस्था से जोड़कर निरन्तर संरक्षण एवं संवर्धन का मार्ग प्रशस्त किया। तत्त्वदर्शी ऋषियों के निर्देशों के अनुसार जीवन व्यतीत करने पर पर्यावरण–असन्तुलन की समस्या ही उत्पन्न नहीं हो सकती है। पर्यावरण में हुए अवांछनीय परिवर्तनों के कारण जल–प्रदूषण, वायु–प्रदूषण, मृदा–प्रदूषण, इलेक्ट्रॉनिक–प्रदूषण, रेडियोधर्मी–प्रदूषण की समस्यायें सर्वत्र व्याप्त हैं।

जल जीवन का प्रमुख तत्त्व है। वेदों में अनेक स्थानों पर उसके महत्त्व पर प्रकाश डाला गया है। ऋग्वेद में एक पूरा सूक्त (10/75) ही नदियों की स्तुति में है। इसी वेद में 'अप्सु अन्तः अमृतम्, अप्सु भेशजं'[3] के रूप में जल को अमृत तथा औषधि बताकर उसका वैशिष्ट्य प्रतिपादित किया गया है। अतः जल की शुद्धता एवं स्वच्छता अत्यन्त आवश्यक है। अथर्ववेदीय पृथ्वी सूक्त में जल तत्त्व पर विचार करते हुए उसकी शुद्धता को मानव–जीवन के लिए नितान्त आवश्यक माना गया है– ''शुद्धा न आपस्तन्वे क्षरन्तु''[4]। इस प्रकार भूमि में सरसता तथा पृथ्वी पर हरीतिमा के लिये जल–संरक्षण अपेक्षित है।

''वर्षेण भूमिः पृथिवी वृतावृता सा नो दधातु

भद्रया प्रिये धामनिधामनि।''[5]

संसार की प्रत्येक वस्तु को अथर्ववेद का कवि लोकमंगल के लिये विनियोजित करना चाहता है। जल के लिये कहा गया है –

''शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये।

शं योरभि स्रवन्तु नः।''[6]

सभी ऋतुओं को अनुकूल रखने का वर्णन भी वेदों में प्राप्त होता है। ऋग्वेद में स्पष्टतः कहा गया है–

''उतो स मह्यं इडुंभिः युक्तान् षट् सेषिधत्।''

वायु में जीवनदायिनी शक्ति है। अतएव उसका संरक्षण पर्यावरण की अनुकूलता के लिए अत्यन्त आवश्यक है। वायु वातावरण को पवित्र करने वाला है। ऋग्वेद में एक स्थान पर कहा गया है –

''मह्यं वातः पवताम्''[7]

अर्थात् मुझे वायु पवित्र करे। वेदों में वायु की स्तुति की गयी है, वायु से ही हम श्वॉस लेते हैं, अतः वायुमण्डल की आवश्यक गैसों की मात्रा में सन्तुलन जरूरी है। पादप एवं जन्तु दोनों ही पर्यावरण–सन्तुलन के प्रमुख घटक हैं। इसलिए दोनों का ही सन्तुलित अनुपात में रहना अनिवार्य है। वेदों में वृक्ष–पूजन का विधान है। ऋग्वेद में वनदेवी अरण्यानी को बहुत अन्नों वाली, सबसे महान् तथा समस्त वन्य जन्तुओं की माता कहा गया है। वन के कल्याणकारी होने का उल्लेख अथर्ववेद में प्राप्त होता है –

'अरण्यं ते पृथ्वी स्योनमस्तु।'[8]

वर्तमान समय में वृक्षों की निर्ममतापूर्वक कटाई से वातावरण में CO_2 की मात्रा में अतिशय वृद्धि हो रही है, जिसके कारण तापमान बढ़ता जा रहा है, जो कि पर्यावरण के लिए संकट का सूचक है।

यजुर्वेद में 'मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे'[9] के संकल्प के माध्यम से सभी प्राणियों के प्रति सहृदयता व्यक्त की गयी है। सभी प्राणियों, जीवों और पेड़–पौधों के प्रति सन्तुलन पर्यावरण–संरक्षण के लिए

आवश्यक है। यदि हमें महाविनाश से बचना है, तो प्राकृतिक–सन्तुलन को बिगाड़ने की चेष्टा कभी नहीं की जानी चाहिए। नदी को हमेशा सन्तुलन के दो कगारों के बीच ही बहना चाहिए। उसमें व्यवधान उपस्थित होने पर वह आवर्त बना डालती है, किनारों को झकझोरने लगती है, तटबन्ध को तोड़ देना चाहती है। फिर जलप्लावन शुरू हो जाता है, बाढ़ का प्रकोप बढ़ जाता है। अथर्ववेद के पृथ्वी–सूक्त में भी जलधारा के दिन–रात बिना प्रमाद के बहने की बात कही गयी है –

"यस्यामापः परिचराः समानी–

रहोरात्रे अप्रमादं क्षरन्ति।[10]

'माऽपो–मौषधीर्हिंसीः'[11] के अनुसार जल तथा वनस्पतियों की हिंसा का निषेध किया गया है।

जल की तरह वायु में अवरोध उत्पन्न होने से भी बवंडर खड़ा हो जाता है, तूफान आ जाता है, जिससे जन–धन की अत्यधिक हानि होती है।

वस्तुतः पर्यावरण–संरक्षण के महत्त्व के प्रतिपादनार्थ ही वेदों में अनेक स्थलों पर जल, वायु, पृथ्वी, अग्नि आदि का स्तवन किया गया है।

पर्यावरण की शुद्धि में अग्नि का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण योगदान है। अतः इसे 'विश्वशुचे'[12] और 'पावक'[13] कहा गया है। ऋग्वेद में अग्नि को पिता के समान कल्याण करने वाला कहा गया है –

'स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव।

सचस्वा नः स्वस्तये।'14

वेदमंत्रों का अर्थ विभिन्न श्रौतयागों के प्रसaग में भी प्राप्त होता है। इन यज्ञों के महिमामण्डन से जो निष्कर्ष प्राप्त होता है, उनके मूल में ऋषियों की पर्यावरण के प्रति चेतना ही दृष्टिगत होती है। मुख्यतः वायुशोधन एवं वृष्टि में यज्ञों का महत्त्व स्पष्टतः परिलक्षित होता है। 'यज्ञोऽयं सर्वकामधुक्' अर्थात् यज्ञ समस्त कामनाओं की पूर्ति करने वाले होते हैं। याज्ञिक क्रियाओं का वैज्ञानिक ढंग से विश्लेषण एवं अध्ययन 'उत्तर–प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड' के वैज्ञानिकों द्वारा किया गया है तथा आश्चर्यजनक परिणाम प्राप्त हुए। यज्ञ से पूर्व वातावरण में सल्फर डाई ऑक्साइड, नाइट्रस ऑक्साइड तथा जल में बैक्टीरिया की उपस्थिति जहाँ अधिक थी, वहीं यज्ञ–सम्पादन के बाद वातावरण में इनकी उपस्थिति में कमी देखी गयी। यज्ञादि भस्मों की राख का विश्लेषण करने पर ज्ञात हुआ कि उसमें फास्फोरस, पोटैशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम तथा नाइट्रोजन आदि भू–उपयोगी रासायनिक तत्त्वों की अधिकता थी, जो इन क्रियाओं के वैज्ञानिक महत्त्व को प्रदर्शित करती है।

आज हिंसा से विश्व–पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है, उससे कर्म में असन्तुलन उपस्थित हो गया है, इस स्थिति से बचने के लिए वेद–प्रतिपादित सात्विक भाव अपनाना पड़ेगा –

"स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्या चन्द्रमसाविव।

पुनर्ददताऽघ्नता जानता सं गमेमहि।।[15]

ऋग्वेद के ऋषि का उद्‌गार है – ''पूश्च पृथ्वी बहुला न उर्वी भवा तोकाय तनयाय शं योः।'[16] अर्थात् सम्पूर्ण पृथ्वी, समग्र परिवेश शुद्ध रहे, नदी, पर्वत, वन, उपवन सब स्वस्थ रहें। इसके अतिरिक्त ऋग्वेद में वैज्ञानिक अनुसंधान की प्रक्रिया में सूर्य को पिता, पृथ्वी को माता और किरण–समूह को बन्धु के समान आदर देने का स्पष्ट निर्देश है।[17] अथर्ववेद में भी पृथ्वी को माता कहा गया है– 'माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः।'[18]

उपर्युक्त सिंहावलोकन से स्पष्ट प्रतीत होता है कि पर्यावरणीय जैविक एवं अजैविक घटकों की सुरक्षा के प्रति चेतना के मूलस्रोत वेद ही हैं। वेदों में लोक–कल्याण की कामना है। प्रकृति के प्रत्येक अंग में शान्ति की अभिव्यक्ति है, विश्व–मंगल की बलवती इच्छा है, क्योंकि प्रकृति सीधी सौम्य गौ तथा रुष्ट सिंहनी दोनों है। यदि उसके साथ सामंजस्य तथा सहयोग का व्यवहार किया गया तो अनन्त काल तक अपने दुग्ध रूपी सम्पदाओं से हमारा पालन–पोषण करेगी, परन्तु शोषण तथा विदोहन की स्थिति में हमें मार डालने में उसे तनिक भी संकोच न होगा। अतएव ऋषियों ने वायु, जल, औषधियों तथा वनस्पतियों आदि पर्यावरणीय घटकों के प्रति जागरूक रहने का सन्देश दिया है तथा इनमें आयी अशुद्धता को दूर करने हेतु प्रेरित किया है, जिसके द्वारा पर्यावरण–संरक्षण के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है।

सन्दर्भ स्रोत :

1. पर्यावरण भारत की भूमिका, प्राक्कथन, पृ0 – 4, कमलनाथ (पर्यावरण एवं वन मन्त्रालय, भारत सरकार, 1995)
2. संस्कृति एवं पर्यावरण, पृ0 152, हरिष्चन्द्र व्यास, 1993
3. ऋग्वेद – 1/23/19 4. 4. अथर्ववेद – 12/1/30
5. अथर्ववेद – 12/1/52 6. अथर्ववेद – 1/6/1
7. ऋग्वेद – 10/128/2 8. ऋग्वेद – 10/128/2
9. यजुर्वेद – 36/18 10. अथर्ववेद – 12/1/9
11. यजुर्वेद – 6/22 12. ऋग्वेद – 1/12/1
13. ऋग्वेद – 1/12/9 14. ऋग्वेद – 1/1/9
15. ऋग्वेद – 5/51/15 16. ऋग्वेद – 1/189/2
17. ऋग्वेद – 1/164/33 18. अथर्ववेद – 12/1/12

डॉ0 चन्द्रकान्त मिश्र

असिस्टेन्ट प्रोफेसर

राजकीय महाविद्यालय

डुमरियागंज, सिद्धार्थनगर

मो0 : 94158552180

E-mail :ckmishra00@gmail.com